पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2014 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामला सं.2801

सतीश चंद्र श्रीवास्तव, (पूर्व मुन्सिफ, गोपालगंज) पुत्र- स्वर्गीय बांके बिहारी लाल निवासी- एम. आई. जी. 976, अवस विकास कॉलोनी, कुनराघाट, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश।

.....याचिकाकर्ता

बनाम

1. बिहार राज्य
2. विधि सचिव-सह-विधि अनुस्मारक बिहार पटना
3. प्रधान सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग, बिहार सरकार, पटना।
4. पटना उच्च न्यायालय क्षेत्राधिकार, पटना महानिबंधक, पटना उच्च न्यायालय, पटना के माध्यम से।
5. जिला और सत्र न्यायाधीश, गोपालगंज।

.....उत्तरदाता/प्रतिवादीगण

हेडनोट

बिहार सेवा संहिता, 1952-नियम 74 बी.(ii)-याचिकाकर्ता ने रिट याचिका के द्वारा उसे बिहार न्यायिक सेवा से अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्ति तथा उसे न्यायिक कार्यों से मुक्त करने के आदेशों को चुनौती दी है-याचिकाकर्ता ने 1989 में न्यायकर्ता के पद पर 04.07.1989 को योगदान दिया था और जब वह गोपालगंज के न्यायकर्ता के रूप में काम कर रहे थे, तब उन्हें पद से अनिवार्य रूप से 11.12.2013 को सेवानिवृत्त कर दिया गया-नंद कुमार वर्मा बनाम झारखंड राज्य [(2012)3 एस.सी.सी 580] में कहा गया है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिये राय का गठन हालांकि संबंधित

प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर आधारित है, जो संतुष्टि एवं वैद्य सामग्री पर आधारित होनी चाहिये-गुजरात राज्य बनाम उमेदभाई एम.पटेल[(2001)3 एस.सी.सी.341] में अनिवार्य सेवानिवृत्ति पर व्यापक सिद्धांत प्रतिवादन किया - वर्तमान मामले में याचिकाकर्ता को अनिवार्य सेवानिवृत्ति केवल सार्वजनिक हित में थी, क्योंकि उनकी सेवा असंतोषजनक और सेवा में बने रहने के लिये अनुपयुक्त पायी गयी थी-यह न्यायालय संतुष्ट है कि इसमें आक्षेपित निर्णय न तो दंडात्मक है और न ही याचिकाकर्ता पर कोई कलंक है और इस प्रकार याचिकाकर्ता का प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होने का दावा बिल्कुल भी टिकाऊ नहीं है-रिट याचिका खारिज की जाती है- [पारा 1,4,5,6,12,15,16,18,26 और 28]

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में**2014 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामला सं.2801**

सतीश चंद्र श्रीवास्तव, (पूर्व मुन्सिफ, गोपालगंज) पुत्र- स्वर्गीय बांके बिहारी लाल निवासी- एम. आई. जी. 976, अवस विकास कॉलोनी, कुनराघाट, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश।

.....याचिकाकर्ता

बनाम

1. बिहार राज्य
2. विधि सचिव-सह-विधि अनुस्मारक बिहार पटना
3. प्रधान सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग, बिहार सरकार, पटना।
4. पटना उच्च न्यायालय क्षेत्राधिकार, पटना महानिबंधक, पटना उच्च न्यायालय, पटना के माध्यम से।
5. जिला और सत्र न्यायाधीश, गोपालगंज।

.....उत्तरदाता/प्रतिवादीगण

उपस्थिति:

याचिकाकर्ता के लिए: उच्च न्यायालय की न्यायमित्र श्रीमती स्मृति सिंह

उच्च न्यायालय के लिए: श्री पीयूष लाल, अधिवक्ता

राज्य के लिए: श्री यू.एस.एस. सिंह, जी.पी.-19,

श्री उदय भान सिंह, ए. सी. से जी.पी.-19 के ए.सी.

कोरम: माननीय मुख्य न्यायाधीश

एवं

माननीय न्यायाधीश श्री हरीश कुमार

कैव निर्णय

(द्वारा: माननीय न्यायमूर्ति श्री हरीश कुमार)

तिथि: 07-03-2024

इस तथ्य पर ध्यान देते हुए कि याचिकाकर्ता एक न्यायिक अधिकारी है, जिसे वर्ष 2013 में अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त किया गया था, लेकिन बार-बार स्थगन और उचित अवसर की अनुमति के बावजूद, याचिकाकर्ता की ओर से लगातार कोई भी पेश नहीं हुआ, इसलिए, इस न्यायालय ने न्याय के उद्देश्यों के लिए, याचिकाकर्ता की ओर से न्यायालय की सहायता के लिए तत्काल रिट आवेदन में श्रीमती स्मृति सिंह को न्याय मित्र के रूप में नियुक्त किया।

2. श्री पीयूष लाल, विद्वान अधिवक्ता, पटना उच्च न्यायालय का प्रतिनिधित्व करते हैं और श्री यू. एस. एस. सिंह, विद्वान जी. पी.-19, राज्य का प्रतिनिधित्व करते हैं।

3. याचिकाकर्ता जो बिहार न्यायिक सेवा के 22 वें बैच का अधिकारी था एवं नियुक्त हुआ था एवं 04.07.1989 को मुंसिफ के पद पर अपनी कार्यग्रहण-तिथि समर्पित की, बिहार सरकार के सामान्य प्रशासन विभाग की अधिसूचना सं. 18521, दिनांकित 05.12.2013 के द्वारा 1952 की बिहार सेवा संहिता का नियम 74 (बी)(ii) के तहत जनहित में बिहार न्यायिक सेवा से अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त हुआ था से व्यथित होकर, इसे रद्द करने की माँग करते हुए वर्तमान याचिका दायर की। याचिकाकर्ता ने विद्वान जिला एवं सत्र न्यायाधीश गोपालगंज द्वारा जारी आदेश सं.226ए, दिनांकित 07.12.2013 को देखते हुए उन्हें न्यायिक कार्यों से विमुक्त किया था एवं उन्हें अपने न्यायालय एवं कार्यालय का भार मुन्सिफ, गोपालगंज को सौंपने का निर्देश दिया।

4. संक्षिप्त तथ्य, जिसके कारण वर्तमान रिट याचिका दायर की गई, वे हैं कि याचिकाकर्ता को गोपालगंज के न्यायाधीशपद के रूप में मुन्सिफ के रूप में नियुक्त किया गया था, पटना उच्च न्यायालय में कुछ आरोप याचिका प्राप्त हुई थी, जिसके बाद एक रिपोर्ट संबंधित जिला और सत्र न्यायाधीश से माँगा गया और मामले को रिपोर्ट के साथ न्यायाधीशपद के विद्वान निरीक्षण न्यायाधीश के समक्ष रखा गया।

5. संबंधित पीठासीन अधिकारी द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण से असंतुष्ट होने पर, मामले को स्थायी समिति के समक्ष रखा गया। इस बीच, याचिकाकर्ता के खिलाफ अधिवक्ताओं की एक टीम द्वारा आगे संयुक्त आरोप याचिका भी उच्च न्यायालय में प्राप्त हुई, जिसे जिला और सत्र न्यायाधीश, गोपालगंज की एक रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद गोपालगंज के विद्वान निरीक्षण न्यायाधीश के माध्यम से स्थायी समिति के समक्ष रखा गया था।

6. पटना उच्च न्यायालय की स्थायी समिति ने विद्वान निरीक्षण न्यायाधीश के कार्यवृत्त, संबंधित जिला और सत्र न्यायाधीश की रिपोर्ट और याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण पर विचार करने के बाद रजिस्ट्री को पूरे सेवा रिकॉर्ड और आरोप फाइल के साथ मामले को रखने का निर्देश दिया।

7. स्थायी समिति ने न्यायाधीशपद के संबंधित जिला न्यायाधीश द्वारा दर्ज की गई गोपनीय टिप्पणियों और सेवा रिकॉर्ड पर ध्यान दिया, जिससे पता चला कि याचिकाकर्ता के खिलाफ कुल ग्यारह आरोप याचिकाओं पर कार्रवाई की गई थी, जिनमें से सात आरोप याचिकाएं निपटारा कर दिया गया और उनके खिलाफ तीन आरोप याचिकाएं संबंधित समय पर लंबित पाई गईं। सेवा रिकॉर्ड से, यह भी प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ ज्ञापन संख्या 16287/कानूनी प्रकोष्ठ, दिनांक 10.12.2007 के माध्यम से एक विभागीय कार्यवाही शुरू की गई थी और उसके खिलाफ अवज्ञा और कदाचार के आरोप लगाए गए थे, जिससे उसका निलंबन हुआ, जो अंततः विभागीय कार्यवाही को हटाने में समाप्त हो गया, जिसमें ज्ञापन सं. 4652, दिनांकित 28.03.2003 के माध्यम से भविष्य में सावधानी बरतने की चेतावनी दी गई थी।

8. सभी पूर्व-उल्लिखित विस्तारित तथ्यों पर विचार करने के बाद, याचिकाकर्ता के सेवा रिकॉर्ड और उसकी संदिग्ध ईमानदारी पर विचार करने के बाद, पटना उच्च न्यायालय की स्थायी समिति ने यह सिफारिश करने का संकल्प लिया कि बिहार सेवा संहिता, 1952 के नियम 74 (बी) (ii) के तहत प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए, उसे जनहित में अपनी सेवा से सेवानिवृत्त किया जाए और उसे नोटिस के बदले में तीन महीने का वेतन और अन्य भत्ते दिए जाएं। पूर्व-उल्लिखित प्रस्ताव 05.10.2013 पर आयोजित उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायालय की बैठक में रखा गया था और यह संकल्प लिया गया था कि याचिकाकर्ता को जनहित में अपनी सेवा से सेवानिवृत्त किया जाए। तदनुसार, पटना उच्च न्यायालय की उपरोक्त सिफारिश के आलोक में, जैसा कि पत्र संख्या 770 दिनांक 19.10.2013 के माध्यम से सूचित किया गया है, सामान्य प्रशासन विभाग में राज्य सरकार ने अधिसूचना सं. 18521, दिनांकित 05.12.2013 जारी किया, जिसके द्वारा बिहार सेवा संहिता, 1952 के नियम 74 (बी) (ii) के तहत तीन महीने के पूर्व नोटिस के बदले में तीन महीने के वेतन और अन्य भत्तों के साथ सार्वजनिक हित में याचिकाकर्ता को अपनी सेवा से अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त की जाए।

9. न्यायमित्र श्रीमती स्मृति सिंह ने विभिन्न प्रस्तुतियों के अलावा अनिवार्य सेवानिवृत्ति के विवादित आदेश को चुनौती देते हुए जोर देकर कहा कि मामले के किसी भी दृष्टिकोण से, उत्तरदाताओं की ओर से पटना उच्च न्यायालय द्वारा महानिबंधक के माध्यम से जारी किए गए पत्र दिनांकित 07.12.2013 की एक प्रति याचिकाकर्ता को प्रदान करना अनिवार्य था, जिसके तहत उन्हें सभी न्यायिक कार्यों से तुरंत मुक्त कर दिया गया था। बहुत अनुनय किया गया है कि मामले के किसी भी दृष्टिकोण में, याचिकाकर्ता को आधार और उन आरोपों को जानने का अधिकार था जिनके आधार पर उसे न्यायिक कार्यों के निर्वहन से रोक दिया गया था, जिसके कारण अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश पारित किया गया था। उन्होंने तर्क दिया कि न्यायिक सेवा के सदस्यों के खिलाफ ऐसी कार्रवाई करने से पहले प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत लागू होते हैं। इस प्रकार, उत्तरदाताओं की कार्रवाई को प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होने के कारण चुनौती दी जाती है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि सेवा पुस्तिका से भी पता चलता है कि याचिकाकर्ता एक

अच्छा अधिकारी था और उसका काम संतोषजनक पाया गया है, हालांकि बहुत अच्छा है और उत्कृष्ट नहीं। इसके अलावा, न्यायाधीशपद के विद्वान निरीक्षण न्यायाधीश द्वारा दर्ज की गई गोपनीय टिप्पणियों, जहां याचिकाकर्ता को नियुक्त किया गया था, ने बी + प्राप्त किया।

10. विद्वान न्यायमित्र ने राम इकबाल शर्मा बनाम बिहार राज्य (1990)3 एस सी सी के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय को आगे संदर्भित किया।

11. इसके विपरीत, उच्च न्यायालय के विद्वान अधिवक्ता श्री लाल ने तर्क दिया कि यह स्थापित कानून है कि सार्वजनिक हित में एक सरकारी कर्मचारी को सेवानिवृत्त करने का निर्णय लेते समय प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत लागू नहीं होते हैं, क्योंकि यह न तो दंडात्मक प्रकृति का होता है और न ही कोई प्रतिकूल परिणाम देता है। इस प्रकार उन्होंने प्रस्तुत किया कि वर्तमान मामले में, बिहार सेवा संहिता, 1952 के नियम 74 (बी) (ii) के तहत अपने पूरे सेवा रिकॉर्ड के आधार पर जनहित में याचिकाकर्ता को सेवानिवृत्त करने का निर्णय लेने से पहले, उच्च न्यायालय द्वारा उन्हें कोई कारण बताओ या नोटिस जारी करने की आवश्यकता नहीं थी। याचिकाकर्ता अपने इस दावे से कोई लाभ नहीं ले सकता है कि उच्च न्यायालय के दिनांकित 07.12.2013 के पत्र को विवादित आदेशों के साथ उसे प्रदान नहीं किया गया था, क्योंकि याचिकाकर्ता को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने का निर्णय उक्त पत्र के आधार पर नहीं लिया गया था। इसके अलावा, बाद में, याचिकाकर्ता को उक्त पत्र दिनांकित 07.12.2013 की एक प्रति प्रदान की गई, जैसा कि उसने रिट याचिका में प्रस्तुत किया था, अनुलग्नक के रूप में चिह्नित किया गया था।

12. यह आगे तर्क दिया गया कि याचिकाकर्ता को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने का निर्णय उच्च न्यायालय द्वारा सार्वजनिक हित में उसके पूरे सेवा रिकॉर्ड पर विचार करने के बाद लिया गया था, न कि किसी भी सजा के रूप में, जैसा कि आरोप लगाया गया है, क्योंकि वही आनंद के सिद्धांत का एक पहलू है जो वस्तुनिष्ठ सामग्री के आधार पर व्यक्तिपरक रूप से लिया गया है और सेवा की समाप्ति नहीं है। विद्वान वकील ने आगे तर्क दिया कि कानून के लिए यह आवश्यक नहीं है कि संबंधित सरकारी कर्मचारी को उसे अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने के कारणों

के बारे में सूचित किया जाए या इस तरह की सेवानिवृत्ति का आदेश इसके अलावा किसी अन्य कारण को फिर से नियुक्त करे जो सार्वजनिक हित में है। एक बार जब न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 235 के तहत प्रदत्त अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए निर्णय ले लेता है, तो याचिकाकर्ता को सेवा में बनाए रखना जनहित में नहीं होगा। याचिकाकर्ता को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने का उच्च न्यायालय का निर्णय, बिहार राज्य के न्यायिक अधिकारियों और जिला न्यायपालिका पर पूर्ण नियंत्रण की अपनी संवैधानिक शक्ति का प्रयोग करते हुए लिया गया था।

13. न्यायमित्र और उच्च न्यायालय के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद, इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय की रजिस्ट्री द्वारा प्रस्तुत सेवा अभिलेखों का भी अध्ययन किया है।

14. अभिलेखों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता को बहुत पहले वर्ष 1989 में मुन्सिफ के पद पर नियुक्त किया गया था और जब वह गोपालगंज के न्यायाधीशपद के तहत काम कर रहे थे, तब उन्हें मुन्सिफ के पद से अनिवार्य रूप से 11.12.2013 के प्रभाव से सेवानिवृत्त कर दिया गया था, जो उनके प्रदर्शन को कभी भी मानदंड से ऊपर नहीं पाए जाने के बारे में मुखरता से बताता है। याचिकाकर्ता की गोपनीय टिप्पणी स्पष्ट रूप से उसकी औसत योग्यता की बात करती है और कुछ अवसरों पर, उसकी संदिग्ध ईमानदारी के अलावा, उसकी प्रतिष्ठा भी अच्छी नहीं पाई गई है। अधिकांश समय, उन्हें अभद्र पाया गया है और उनके अपने सहयोगियों के साथ कोई अच्छे संबंध नहीं थे, इसके अलावा उनके सेवा रिकॉर्ड ने उनके अनियमित आदेशों को भी उजागर किया, जिससे संबंधित जिला और सत्र न्यायाधीश द्वारा चेतावनी और सावधानी बरती गई।

15. यह उल्लेखनीय है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए राय का गठन हालांकि संबंधित प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर आधारित है, जो संतुष्टि, फिर भी, एक वैध सामग्री पर आधारित होनी चाहिए। **नंद कुमार वर्मा बनाम झारखंड राज्य [(2012) 3 एससीसी 580]** में यह निम्नलिखित रूप में आयोजित किया गया था:-

“34. यह भी अच्छी तरह से तय किया गया है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए राय का गठन संबंधित प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर आधारित है, लेकिन ऐसी संतुष्टि वैध सामग्री पर आधारित होनी चाहिए। न्यायालयों को यह पता लगाने की अनुमति है कि क्या कोई वैध सामग्री मौजूद है या अन्यथा, जिस पर प्रशासनिक प्राधिकरण की व्यक्तिपरक संतुष्टि आधारित है। ”

16. गुजरात राज्य बनाम उमेदभाई एम. पटेल [(2001) 3 एस. सी. सी. 314] ने अनिवार्य सेवानिवृत्ति पर निम्नलिखित व्यापक सिद्धांतों का प्रतिपादन किया:

“11. अनिवार्य सेवानिवृत्ति से संबंधित कानून अब एक निश्चित सिद्धांत धारण कर चुका है, जिसे मोटे तौर पर इस प्रकार संक्षेपित किया जा सकता है:

(i) जब भी किसी लोक सेवक की सेवाएँ सामान्य प्रशासन के लिए उपयोगी नहीं होती हैं, तो लोक हित के लिए अब और अधिकारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त किया जा सकता है।

(ii) आम तौर पर, अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को संविधान के अनुच्छेद 311 के तहत आने वाली सजा के रूप में नहीं माना जाना चाहिए।

(iii) बेहतर प्रशासन के लिए, मृत लकड़ी को काटना आवश्यक है, लेकिन अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश अधिकारी के पूरे सेवा रिकॉर्ड को ध्यान में रखते हुए पारित किया जा सकता है।

(iv) गोपनीय अभिलेख में की गई किसी भी प्रतिकूल प्रविष्टि पर ध्यान दिया जाएगा और इस तरह के आदेश को पारित करने में उचित महत्व दिया जाएगा।

(v) गोपनीय अभिलेख में असंबद्ध प्रविष्टियों को भी ध्यान में रखा जा सकता है।

(vi) अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश जब ऐसा पाठ्यक्रम अधिक वांछनीय हो तो विभागीय जांच से बचने के लिए एक शॉर्ट कट के रूप में पारित नहीं किया जाए।

(vii) यदि गोपनीय अभिलेख में प्रतिकूल प्रविष्टियों के बावजूद अधिकारी को पदोन्नति दी गई थी, तो यह अधिकारी के पक्ष में एक तथ्य है।

(viii) अनिवार्य सेवानिवृत्ति को दंडात्मक उपाय के रूप में नहीं लगाया जाएगा। ”

17. यह जाँचने के लिए कि क्या अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश एक दंड है या उस रूप में बर्खास्तगी, "यह देखने के लिए है कि क्या अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश अनुपयुक्तता की चिंता के कारण है या कदाचार के लिए सजा के रूप में" जैसा कि निशा प्रिया भाटिया बनाम भारत संघ [(2020) 13 एस. सी. सी. 56]में माना गया है।

18. वर्तमान मामले के तथ्यों पर आने वाले पूर्व-उल्लिखित निर्णय के आलोक में, निस्संदेह, याचिकाकर्ता की अनिवार्य सेवानिवृत्ति केवल सार्वजनिक हित में थी, क्योंकि उनकी सेवा असंतोषजनक और सेवा में बने रहने के लिए अनुपयुक्त पाई गई थी। अधिकारी के ए. सी. आर., पिछले दस वर्षों के निपटान के मूल्यांकन, सतर्कता शिकायतों, विभागीय जांच और प्रशासनिक शिकायतों को ध्यान में रखने के अलावा, बिहार सेवा संहिता, 1952 के नियम 74 (बी) (ii) के संदर्भ में जनहित में बिहार न्यायिक सेवा से अनिवार्य सेवानिवृत्ति के मामलों में विचार के लिए कौन से मानदंड लागू किए जाने थे।

19. कुछ गोपनीय टिप्पणियों को उजागर करने के लिए, जो पूर्ण न्यायालय को अनिवार्य सेवानिवृत्ति का निर्णय लेने के लिए बाध्य करती हैं, कुछ गोपनीय टिप्पणियों को दोहराना प्रासंगिक होगा।

क्रम संख्या	तिथि	टिप्पणियां
1.	22.06.1994	औसत योग्यता वाला अधिकारी।
2.	25.07.1995	औसत योग्यता वाला अधिकारी।
3.	02.09.1996	एक औसत अधिकारी।

4.	14.06.1997	निपटान-औसत से बहुत बेहतर। ईमानदारी-संदिग्ध, जैसा कि कॉलम नं.5 (स्तम्भ संख्या 5 में निम्नलिखित उल्लेख किया गया है:- प्रतिष्ठा-अच्छी नहीं है। सत्यनिष्ठा-बोर्ड से ऊपर नहीं उनके अनियमित आदेशों के बारे में उदाहरण--(1) जी.आर. केस नं. 601/95 में दिनांक 17.10.95 द्वारा आदेश पारित किया गया। जिसमें उन्होंने आरोपी को आई.पी.सी. की धारा 302 के तहत जमानत दे दी थी, जिसमें पहले ही दिन केस डायरी को देखे बिना खुलआम कार्रवाई करने का आरोप लगाया गया था, जिसके खिलाफ अपराधिक विविध 50/95 जमानत रद्द करने के लिए दायर किया गया था और उन्हें मेरे द्वारा भविष्य में सावधान रहने का निर्देश दिया गया था। उनके खिलाफ ऐसे कई आरोप मिले थे।)
5.	27.04.1998	संतोषजनक
6.	11.05.1999	संतोषजनक
7.	23.05.2000	खराब
8.	2000-2001	एक औसत अधिकारी।
9.	14.08.2002	वह अच्छा व्यवहार करने वाले अधिकारी हैं।
10.	25.07.2003	वह अच्छा व्यवहार करने वाले अधिकारी हैं।
11.	12.05.2004	औसत अधिकारी।
12.	25.05.2005	वह एक अच्छे अधिकारी हैं। संतोषजनक निर्णय

		लिखते हैं।
13.	04.05.2006	वह एक अच्छे अधिकारी हैं। काफी निष्पक्षता से निर्णय लिखते हैं।
14.	05.02.2007	एक अच्छा अधिकारी नहीं। सुधार की जरूरत है।
15.	25.06.2010	संतोषजनक
16.	23.02.2012	बी+

20. यह दोहराने की आवश्यकता नहीं है कि अप्रत्यक्ष भाग में एक अधिकारी की ईमानदारी के संबंध में एक भी प्रतिकूल प्रविष्टि अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने के लिए पर्याप्त है, जैसा कि प्यारे मोहन लाल बनाम झारखंड राज्य और अन्य [(2010) 10 एस. सी. सी. 693] मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है। इसके पैरा 29 को उद्धृत करना उचित होगा।

“29. कानून प्राधिकरण से यह आकलन करते हुए कर्मचारी के "पूरे सेवा रिकॉर्ड" पर विचार करने की अपेक्षा करता है कि क्या उसे अनिवार्य सेवानिवृत्ति दी जा सकती है, इस तथ्य के बावजूद कि प्रतिकूल प्रविष्टियों के बारे में उसे सूचित नहीं किया गया था और उन प्रतिकूल प्रविष्टियों के बावजूद अधिकारी को पहले पदोन्नत किया गया था। इसके अलावा, अप्रत्यक्ष अतीत में भी एक अधिकारी की ईमानदारी के बारे में एक प्रतिकूल प्रविष्टि अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने के लिए पर्याप्त है। एक न्यायिक अधिकारी के मामले की जांच की आवश्यकता होती है, उसे समाज के अन्य अंगों से अलग मानते हुए, क्योंकि वह एक अलग क्षमता में राज्य की सेवा कर रहा है। न्यायिक अधिकारी के मामले पर माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा विधिवत गठित उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की एक समिति द्वारा विचार किया जाता है और फिर समिति की रिपोर्ट को पूर्ण न्यायालय के समक्ष रखा जाता है। पूर्ण न्यायालय द्वारा मामले पर उचित विचार-विमर्श के पश्चात् एक निर्णय लिया गया

है। इसलिए, मन (बुद्धि) का उपयोग न करने या दुर्भावनापूर्ण होने के आरोप लगाने की शायद ही कोई संभावना हो।

21. यह न्यायालय इस तथ्य से भी अवगत है कि प्रक्रियात्मक अनियमितता या दुर्भावना को कोई चुनौती नहीं दी गई है, सिवाय इसके कि विवादित आदेश प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन कर रहे हैं।

22. अब राम इकबाल शर्मा (उपरोक्त) में दिए गए निर्णय पर आते हैं, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि:

“32. उपरोक्त निर्णयों पर विचार करने पर अब जो कानूनी स्थिति सामने आती है, वह यह है कि भले ही अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश सरकारी कर्मचारी, जिसे अनिवार्य रूप से सेवा से सेवानिवृत्त होने का निर्देश दिया गया है, के खिलाफ कोई आरोप हानिरहित भाषा में लगाए बिना दिया गया है, अदालत, यदि चुनौती दी जाती है, तो उचित मामलों में यह पता लगाने के लिए खुलासा कर सकती है कि क्या आदेश संबंधित सरकारी कर्मचारी के किसी कदाचार पर आधारित है या आदेश को प्रामाणिक बनाया गया है और किसी भी अप्रत्यक्ष या बाहरी उद्देश्यों के साथ नहीं।

23. सावधानीपूर्वक विचार करने के लिए, यह न्यायालय याचिकाकर्ता के पूर्ण सेवा अभिलेखों को देखी है एवं पाया कि 1952 की बिहार सेवा संहिता के नियम 74(बी)(ii) के तहत प्रदत्त शक्ति का जनहित में प्रयोग करते हुए याचिकाकर्ता को स्थायी समिति की अनुशंसा पर सेवा से सेवानिवृत्त की जाए, जिसे 05.10.2013 को हुई पूर्ण न्यायालय बैठक में विधिवत स्वीकार किया गया था, जो उनके न्यायिक पदाधिकारी के पद पर बने रहने की उनकी अनुपयुक्ता पर पूर्णरूपेण आधारित था। क्योंकि उनकी सेवा अनुपयुक्त होने के अलावा, उनकी ईमानदारी भी बोर्ड के ऊपर नहीं पाई गई थी और 1989 से 2013 तक की उनकी पूरी सेवा अवधि में पदोन्नति की गैर-मंजूरी, उनके प्रदर्शन के बारे में स्पष्ट रूप से बोलते हैं, समग्र प्रदर्शन के पूर्ण पुनर्मूल्यांकन के बाद एक समूह से अनावश्यक लोगों को हटाने की युक्ति का आधार प्रस्तुत करना।

24. यह ध्यान देने योग्य होगा कि नियोक्ता की व्यक्तिपरक संतुष्टि के आधार पर अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश की न्यायिक समीक्षा की गुंजाइश तब तक बेहद सीमित है जब तक कि यह मनमाना, मनमौजी, दुर्भावनापूर्ण या प्रासंगिक सामग्री की अनदेखी या की उपेक्षा आदि नहीं पाई जाती है। राम मूर्ति यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य [2020] 1 एस. सी. सी. 801] के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने एक न्यायिक अधिकारी के कर्तव्य पर प्रकाश डालते हुए इसे एक पवित्र कर्तव्य माना है, जो अपने पेशेवर और व्यक्तिगत जीवन दोनों में ईमानदारी और सत्यनिष्ठा के उच्च मानक का आधिपत्य करता है, एक सार्वजनिक न्यास का पद धारण करता है; और इसके अलावा अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश की न्यायिक समीक्षा के दायरे पर विचार करते हुए निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

“14. न्यायिक सेवा में प्रवेश करने वाले व्यक्ति की पदोन्नति सहित करियर की आकांक्षाएं होती हैं। अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश निस्संदेह करियर की आकांक्षाओं को प्रभावित करता है। ऐसा कहने के बाद, हमें यह भी सावधानी बरतनी चाहिए कि न्यायिक सेवा किसी अन्य सेवा की तरह नहीं है। न्यायिक कर्तव्यों का निर्वहन करने वाला व्यक्ति अपने प्रभुसत्ता-सम्पन्न कार्यों के निर्वहन में राज्य की ओर से कार्य करता है। न्याय का वितरण न केवल एक भारी कर्तव्य है, बल्कि इसे एक पवित्र कर्तव्य के निर्वहन के समान माना गया है, और इसलिए यह एक बहुत ही गंभीर मामला है। ईमानदारी, आचरण, सत्यनिष्ठा के मानक जो किसी अन्य नौकरी में एक स्वार्थजीवी द्वारा कर्तव्यों के निर्वहन के लिए प्रासंगिक हो सकते हैं, एक न्यायिक अधिकारी के लिए समान नहीं हो सकते हैं। एक न्यायाधीश एक सार्वजनिक न्यास का पद धारण करता है। त्रुटिहीन सत्यनिष्ठा, मूल रूप से सन्निहित नैतिक मूल्यों के साथ अनिन्ध स्वतंत्रता पूर्ण अनिवार्यताएं हैं जो किसी भी समझौते को बर्दाश्त नहीं करती हैं। एक न्यायाधीश पूरी न्याय प्रणाली का स्तंभ है और जनता को न्यायिक कार्य करने वाले किसी भी व्यक्ति से लगभग निर्दोष आचरण की मांग करने का अधिकार है। न्यायाधीशों को अपने पेशेवर और व्यक्तिगत जीवन दोनों में ईमानदारी के उच्चतम मानकों के लिए प्रयास करना चाहिए।

15. यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि न्याय की मांग करने वाले व्यक्ति को अधीनस्थ न्यायपालिका के स्तर पर न्याय वितरण प्रणाली का पहला प्रभावन होता है, और इस प्रकार अन्याय की भावना न केवल उस व्यक्ति पर गंभीर अप्रत्यक्ष प्रभाव डाल सकती है, बल्कि समाज में भी इसका प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए, यह बिल्कुल आवश्यक है कि साधारण वादी को इस स्तर पर पूर्ण विश्वास होना चाहिए और किसी वादी को ऐसा कोई प्रभाव नहीं दिया जा सकता है जो इसके विपरीत धारणा भी पैदा कर सके क्योंकि परिणाम बहुत हानिकारक हो सकते हैं। इसलिए, न्यायिक अधिकारी के आचरण को निर्धारित करने के लिए मानक या मापदंड अनिवार्य रूप से सख्त होना चाहिए। ऐसा कहने के बाद, हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि यह हर अनजाने में दोष या त्रुटियां नहीं है जो एक न्यायिक अधिकारी को दोषी बनाती है। राज्य न्यायिक अकादमियों को निस्संदेह इस संबंध में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। एक प्रामाणिक त्रुटियां के लिए सुधार और परामर्श की आवश्यकता हो सकती है। लेकिन एक ऐसा आचरण जो सामान्य से परे एक धारणा पैदा करता है, उसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है। एक प्रशिक्षित कानूनी दिमाग के लिए, एक न्यायिक आदेश अपने लिए बोलता है।

25. बिना किसी संख्या के, सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि बिहार सेवा संहिता, 1952 के नियम 74 (बी) (ii) के संदर्भ में कोई भी आदेश, यदि कलंकित नहीं है, तो कानून राज्य सरकार को इसके अलावा कोई अन्य कारण जनहित में है, निर्धारित करने के लिए बाध्य नहीं करता है।

26. यह न्यायालय संतुष्ट है कि इसमें आक्षेपित निर्णय न तो दंडात्मक है और न ही याचिकाकर्ता पर कोई कलंक है, जिसे केवल उनके सेवा रिकॉर्ड के आधार पर जनहित में लिया गया था और इस प्रकार याचिकाकर्ता का प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होने का दावा, बिल्कुल भी टिकाऊ नहीं है।

27. ऊपर की गई चर्चाओं और कानून की स्थिर स्थिति को देखते हुए, किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

28. रिट याचिका खारिज की जाती है।

29. लागत (ओं) के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

30. रिट याचिका को छोड़ने से पहले, यह न्यायालय न्यायमित्र श्रीमती स्मृति सिंह द्वारा प्रदान की गई सक्षम सहायता के लिए अपनी सराहना दर्ज करेगा।

31. पटना उच्च न्यायालय, कानूनी सेवा समिति को इसके द्वारा रुपया 5000/- श्रीमती स्मृति सिंह, न्यायमित्र को उनके द्वारा प्रदान की गई सेवाओं के लिए समेकित शुल्क के रूप में भुगतान करने का निर्देश 2014 की रिट याचिका सं. 2801 में दी गई है।

(हरीश कुमार, न्यायमूर्ति)

(के. विनोद चंद्रन, मुख्य न्यायाधीश)-में सहमत हूँ।

(के. विनोद चंद्रन, मुख्य न्यायाधीश)

रोहित/-

खण्डन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।